RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-05
May-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

कौटिल्यकालीन राजतंत्रा

डा. रेणु सिंह

शिक्षिका, (राजनीति विज्ञान) श्री राम लखन सिंह यादव सर्वोदय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, बिहार सरकार, पुनाईचक, पटना–23

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 25 May 2019

Keywords
राजतंत्रा, प्रजा, मत्स्यन्याय, कर्त्तव्य

ABSTRACT

कौटिल्य का राज–व्यवस्था संबंधी महत्त्वपूर्ण ग्रंथ अर्थशास्त्रा का विशद् विश्लेषण है। इस ग्रंथ में अनेक विचारों को समाहित किया गया है । इसमें कौटिल्यकालीन राजतंत्रा का उल्लेख है। तत्कालीन समय में राजपद वंशानुगत हो गया था, एवं उत्तराधिकार के नियम कठोर थे। राज्याभिषेक संस्कार पर कौटिल्य का विशेष बल नहीं देना, परन्तु उसकी अनिवार्यता की चर्चा परम्परा से जुड़ा माना जा सकता है। राजा के गुणों एवं योग्यताओं पर आधरित राजपद की चर्चा है। वस्तुतः कौटिल्य ने राजतंत्रा को ही सबसे उपयुक्त संविधन माना है। भले ही वह प्रजातांत्रिक संविधनों से भी अवगत था। वह राजा से आदर्श चरित्रा की अपेक्षा रख संवैधनिक प्रजातंत्रा का पुट राजतंत्रा में डालना चाहता था।

भूमिका

कौटिल्य ने राजतंत्रा को ही सबसे उपयुक्त संविधन माना है भले ही वह प्रजातांत्रिक संविधनों से भी अवगत था।[1] सप्तांग सि(ांत में भी उसने स्वामी को सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है । उसने स्पष्ट कहा है कि राजा के उपयोग के लिए उसने अर्थशास्त्रा की रचना की।[2] इसमें कोई संदेश नहीं कि प्राचीन भारत में राजा एवं राज्य में कोई अंतर नहीं समझा जाता था। कौटिल्य ने अन्य प्रकृतियों को राजा पर निर्भर माना है चूँकि उनकी प्रगति अथवा पतन उस पर ही निर्भर है। राजा इन सबों का संयुक्त रूप से प्रतिनिध्त्वि करता है।

कौटिल्य के अनुसार 'मत्स्य न्याय' से उफबकर लोगों ने वैवस्वत पुत्रा मनु को राजा बनाया। वैसे इस संबंध् में उसने किसी निश्चित सि(ान्त का प्रतिपादन नहीं किया है। उसने केवल इस बात का उल्लेख किया है कि सुरक्षा प्रदान करने के बदले लोगों ने राजा को अपनी उफपज का छट्ठा भाग, विक्रय से प्राप्त आय का दसवाँ भाग और नकद रूपये, कर के रूप में देना स्वीकार किया। राजा से अपेक्षा की जाती है कि वह इनके बदले प्रजा का सुरक्षा प्रदान करेगा। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वैदिक काल में राजपद निर्वाचित होता था। परन्तु धीरे–धीरे राजपद वंशानुगत हो गया।

राजपद पर प्रतिष्ठित होने के लिए राज्याभिषेक संस्कार की अनिवार्यता का उल्लेख प्राचीन भारतीय साहित्य में हुआ है। ब्राह्मणों में इससे संबंध्ति यज्ञों एवं कर्मकांडों का वर्णन मिलता है। राज्याभिषेक संबंधी तीन यज्ञों का उल्लेख मिलता है – राजसूय, वाजपेय तथा इन्द्राभिषेक।

राजसूय यज्ञ के पश्चात् राजा को शासन करने का अधिकार मिलता है परन्तु राजा के रूप में एक आदर्श व्यक्ति की कल्पना भारतीय राजशास्त्रियों ने की है। कौटिल्य ने राजा के गुणों एवं योग्यताओं का वर्णन किया है। साथ ही साथ वह राजा से अपेक्षा करता है कि वह अवगुणों से दूर रहेगा। कौटिल्य ने ऐसे अवगुणों का भी उल्लेख किया है जिनसे राजा को बचना चाहिए। उसने राजा के तीन प्रकार के गुणों की चर्चा की है। ;1द्ध अभिगामिक गुण ;2द्ध प्रज्ञा गुण और ;3द्ध उत्साह गुण।[3] अभिगामिक गुण के अन्तर्गत राजा को महाकुलीन बु(िमान, ध्ैर्यवान, दूरदर्शी, धर्मिक, सत्यवादी, सत्यप्रतिज्ञ, कृतज्ञ, उच्चाभिलाषी, शीघ्र कार्य करने वाला, सामन्तों को वश में करने वाला होना चाहिए। प्रज्ञागुण के अंतर्गत शास्त्रा ज्ञान, अच्छी स्मरण शक्ति, तर्क करने की क्षमता, अच्छे–बुरे की पहचान, बातों को ग्रहण करने की क्षमता आदि का उल्लेख हुआ है। शौर्य, अमर्ष आदि को उत्साह गुण के अन्तर्गत रखा गया है। राजा को प्रजा वत्सल होना चाहिए। इसके अतिरिक्त राजा को बलवान, संयमी, प्रगल्व, मृदुल, यु(कला में निपुण, वृ(जनों के उपदेशों को मानने वाला, प्रजा को पीड़ित किये बिना राजकोष को भरने की क्षमता आदि गुणों से भी सम्पन्न होना चाहिए। वस्तुतः कौटिल्य ने इन गुणों की आवश्यकता पर इसलिए अध्कि महत्त्व दिया कि इन गुणों से युक्त राजा ही अपनी प्रजा के हितों की रक्षा कर सकता है।

कोटिल्य केवल राजा के लिए आवश्यक गुणों की ही चर्चा नहीं करता बल्कि वह ऐसे अवगुणों का भी उल्लेख करता है जिससे राजा को बचना चाहिए। उसे व्यसनों का परित्याग कर इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना चाहिए। कौटिल्य उन सभी व्यसनों से राजा को दूर रहने की सलाह देता है जो उसे आदर्श से नीचे गिरा दे। काम, क्रोध्, लोभ, मोह आदि दुर्गुणों से दूर रहने की सलाह भारतीय मनीषियों ने दी है।

राजा से आदर्श चरित्रा की अपेक्षा की गई है और इस आदर्श चरित्रा के निर्माण के लिए राजा की शिक्षा पर विशेष जोर दिया गया है। कौटिल्य ने राजा को यह परामर्श दिया है कि अपने आचरण को ठीक रखने के लिए वह उत्तम लोगों की संगति में रहे। जो राजा विद्वान् प्राणी मात्रा के कल्याण में संसलग्न रहता है और प्रजा के शासन तथा शिक्षण में लगा रहता है वह पृथ्वी पर दीर्घकाल तक निर्विरोध् शासन करता है। कौटिल्य ने स्पष्ट लिखा है कि आदर्श जीवन व्यतीत करने का यह अर्थ नहीं कि राजा संत अथवा योगी का जीवन व्यतीत करे, बल्कि उसे अर्थ, काम और ध्र्म के बीच समन्वय

RRIJM 2015, All Rights Reserved

स्थापित करना चाहियः समाज या जनजीवन के बीच समय व्यतीत करना चाहिए।

प्लेटो की भाँति कौटिल्य ने भी राजा के जीवन को व्यवस्थित करने के लिए उसकी दिनचर्या को निर्धरित किया है। इनके अनुसार राजा को चाहिए कि वह दिन और रात को आठ–आठ घड़ियों में बाँट कर अपनी दिनचर्या निर्धरित करे।

इसमें कोई संदेह नहीं कि कौटिल्य ने एक आदर्श व्यक्ति के रूप में राजा को प्रस्तुत किया। परन्तु उसने प्रजावत्सल होते हुए भी राजा को अपनी सुरक्षा पर पूरा ध्यान देने का परामर्श दिया है कौटिल्य यह मानता है कि राजा के मित्रा भी होते हैं और शत्रु भी। इसलिए उसने शत्रुओं से सावधन रहने का परामर्श दिया है। राजदूतों से मिलते समय राजा को मंत्रिापरिषद् के सदस्यों को साथ रखना चाहिए। राजा को सदा अपने साथ सेनानायक तथा दस सैनिकों को साथ रखना चाहिए। यहाँ तक कि देवालय, उत्सव तथा जलसों में अकेले नहीं जाना चाहिए। राजा को पुरूषों की भीड़ में प्रवेश नहीं करना चाहिए। उसे अपने पुत्राों से भी सतर्क रहना चाहिए तथा जन्म से ही राजपुत्राों पर कड़ी निगरानी रखनी चाहिए।

कौटिल्य ने राजा के कार्यों का विस्तृत विवरण दिया है। मनुस्मृति में भी इस पर विचार किया गया है। आठ प्रकार के कार्यों का उल्लेख दोनों ही करते हैं। प्रजा की सुरक्षा संबंधी कार्य को दोनों ने महत्त्व प्रदान किया है। सभी जाति, धर्म के लोगों, अवयस्कों और नारियों की सुरक्षा को राजा का कर्त्तव्य माना गया है। राजा का प्रथम एवं प्रमुख कर्त्तव्य है – प्रजा की रक्षा करना।[4] राज्य में प्रजा की रक्षा को सुनिश्चित करने के लिए राजा को चाहिए कि शांति व्यवस्था बनाये रखें। इस कार्य के लिए कौटिल्य ने साम, दाम और दंड को अपनाने का परामर्श दिया है। परन्तु साथ–ही साथ कौटिल्य ने दंड देने में सावधनी बरतने को कहा है चूँकि दण्ड के अनुचित एवं अन्यायपूर्ण प्रयोग से राजा के विरू(विद्रोह की भी संभावना उत्पन्न हो सकती है।

शांति स्थापना से न्याय–संबंधी कर्त्तव्य जुड़ा है। राजा को न्याय का स्रोत माना गया है। राजा को विधि का स्रोत माना गया है। राजा का कर्त्तव्य है कि वह राज्य के लिए अच्छी विधियों का निर्माण करे। इस कार्य में उसे अपने अमात्यों और अधिकारियों से सहायता लेनी चाहिए। परन्तु कौटिल्य राजा को इस दिशा में मनमानी करने की छूट नहीं देता । धर्मशास्त्रा, नैतिकता और प्रचलित परम्पराओं को ध्यान में रखकर ही विधि–निर्माण की अनुमति देता है।[5]

राजा के कर्त्तव्य क्षेत्रा में उच्चाधिकारियों की नियुक्ति करना सम्मिलित है। राजा का प्रमुख कर्त्तव्य था कि वह योग्य, कर्मठ, ईमानदार और राज्य के प्रति वपफादार व्यक्ति को अमात्य तथा अन्य अधिकारियों के पदों पर बहाल करें। इनकी नियुक्ति के समय राजा को चाहिए कि वह उनकी विद्या, बु(ि साहस के साथ–साथ उनके गुण, दोष, देशकाल आदि पर विचार करे। चूँकि इन्हीं के कंधें पर राज्य के शासन का भार रहता है। पिफर भी, राजा अमात्यों, विभागाध्यक्षों एवं अन्य अधिकारियों के हाथों में शासन–व्यवस्था सौंप कर निश्चिंत नहीं हो सकता है। इसीलिए कौटिल्य राजा को उनकी गतिविधियों और अन्य कार्यों पर नजर रखने का निर्देश देता है। इनको अपने कर्त्तव्य के प्रति सजग रखने के लिए राजा को उनकी निगरानी करनी चाहिए। इसलिए राजा गुपचरों के द्वारा इन अधिकारियों की गतिविधियों एवं आचरण संबंधी जानकारी प्राप्त करता है। कौटिल्य समय–समय पर विभिन्न तरीकों से इन अधिकारियों के आचरण एवं कार्यक्षमता की जाँच करने का भी निर्देश देता है।

कौटिल्य ने राजा के वित्त संबंधी कर्त्तव्य का भी उल्लेख किया है। आय–व्यय की जाँच उसकी दिनचर्या में सम्मिलित किया गया है। वित्तीय व्यवस्था के समुचित संचालन के लिए राज समाहर्त्ता, कोषाध्यक्ष एवं गणनिकों की नियुक्ति करता है। वह कोषागार में जमा ध्न का दुरूपयोग न हो – इस पर नजर रखता है किसी अधिकारी द्वारा इस ध्न का गबन न हो – इस पर भी नजर रखना राजा का कार्य था तथा ऐसे अधिकारी को दंडित करने का भी राजा को अधिकार था।

प्रशासनिक व्यवस्था की तरह राजा सेना एवं विदेश–नीति का भी संचालन करता था। सेना से संबंधित कार्यों का उल्लेख कौटिल्य ने किया है। वह यु(में स्वयं सेना का संचालन भी करता था। सेनापतियों की नियुक्ति एवं उनसे मंत्राणा करना भी उसका कार्य था। उसके दिनचर्या में सैन्य विभाग का निरीक्षण भी सम्मिलित किया गया है। विदेशी राजाओं के साथ यु(एवं संधि की घोषणा करता था। कौटिल्य ने षाड.गुण्य सि(ांत के अंतर्गत राजा की विदेशी नीतियों की विस्तृत विवेचना की है तथा विदेशी राज्यों के साथ उसके महत्त्वपूर्ण कार्यो का उल्लेख किया है।

अतः राजा के कर्त्तव्यों का विस्तृत विवरण कौटिल्य ने प्रस्तुत किया है जिसका मुख्य उद्देश्य था – राज्य में बसने वाली प्रजा का सुख, शांति एवं समृ(प्राप्त हो। इस उद्देश्य की प्राप्ति में राजा को भले हीं स्वयं अपने सुख को त्यागना पड़े। संभवतः राजा के लिए यह आदर्श भारतीय परम्परा रही है।[6]

कौटिल्य ने[6] निस्संदेह राजा को राज्य का सर्वोच्च अधिकारी ही नहीं बल्कि सर्व–शक्तिमान बना दिया है । कौटिल्य ने इस बात की चेतावनी दी है कि राजा कितने भी बड़ा राज्य का स्वामी हो अगर उसका चरित्रा अनुकूल नहीं है अथवा उसके इन्द्रिय नियंत्राण में नहीं है तो उसका विनाश निश्चित है। लोकमत का भय भी राजा पर नियंत्राण रखता है ।

धर्म तथा सामाजिक नियमों के बंध्न के चलते राजा स्वेच्छाचारी नहीं वरन् सही रास्ते पर चलने को बाध्य था । अल्तेकर के अनुसार 'प्राचीन काल में सम्प्रभुता अंतिम रूप से जनता में निवास करती थी'। राधकृष्ण चौधरी ने सही कहा कि

'कौटिल्य का राजा, सि(ान्त तथा व्यवहार में स्वच्छन्द नहीं था'।

कौटिल्य का राजा निस्संदेह सर्वोच्य अध्किारी था। सारी राजशक्ति उसमें समाहित थी। राजा राज्य की जिन व्यवस्थाओं की स्वयं देख–रेख करता था, वे केन्द्रीय शासन के क्षेत्रा के अन्तर्गत आते हैं । वैसे राज्य के सभी कार्य राजा के नाम पर ही किये जाते हैं। कौटिल्य ने राज्य प्रशासन के उच्चतर पदों पर प्रतिष्ठित अध्किारियों को 18 तीर्थों में वर्गीकृत किया है। जैसे – 1. मंत्राी, 2. पुरोहित, 3. सेनापति, 4. युवराज, 5. दौवारिक, 6. अंतर्वशिक, 7. प्रशास्ता, 8. समाहर्त्ता, 9. सन्निधता, 10. प्रदेष्टा, 11. नायक, 12. पौर, 13. व्यवहारिक, 14. कर्मान्तिक, 15. दंडपाल, 16. अंतपाल, 17. दुर्गपाल, 18. आरविक। कौटिल्य ने इन अध्किारियों के वेतन एवं भत्ते का भी विवरण दिया है जिसके आधर पर इनका वरीयता क्रम भी ज्ञात होता है।

इन तीर्थों के सर्वप्रथम मंत्राी का उल्लेख किया गया है। अर्थात् स्वामी के बाद मंत्राी का स्थान था। कौटिल्य ने मंत्रिापरिषद् को शक्ति का महत्त्वपूर्ण स्रोत माना है । अर्थात् शासन तंत्रा का मंत्राी अथवा मंत्रिापरिषद् राजा के बाद दूसरा महत्त्वपूर्ण स्तम्भ है । कौटिल्य ने भी मंत्रियों की योग्यता के संबंध में अपना विचार व्यक्त किया है । उसके अनुसार मंत्रियों को कुलीन, स्वदेशोत्पन्न, अवगुण शून्य, निपुण सवार, ललित कलाओं का ज्ञाता, अर्थशास्त्रा का विद्वान, स्मरणशक्ति सम्पन्न, चतुर, वाक्पटु, प्रगल्य, उत्साही, प्रभावशाली, सहिष्णु, पवित्रा, दृढ़, स्वामीभक्त, सुशील, समर्थ, ध्ैर्यवान्, निराभिमानी, स्थिरप्रकृत, प्रियदर्शी और स्वस्थ होना चाहिए । मंत्रियों की नियुक्ति के पश्चात् राजा को निश्चिन्त नहीं होना चाहिए, बल्कि समय–समय पर तथा विभिन्न प्रकार से इनकी योग्यता एवं स्वामी भक्ति की जाँच करनी चाहिए। कौटिल्य ने राजा को परामर्श दिया है कि वह तीन या चार मंत्रियों के साथ बैठकर गोपनीय बातों पर विचार–विमर्श करें । कौटिल्य ने अठ्ठारह तीर्थों ;पदाध्किारियोंद्ध को तीन श्रेणियों में बाँटा है और उन्हीं के अनुरूप उनका वेतन एवं भत्ता निर्धरित किया है। उसने मंत्रिापरिषद् को दो भागों में बाँटा है, अन्तर भाग एवं बाह्य भाग। अंतर भाग का कार्य था नीति– निर्धरण करना तथा बाह्य भाग का कार्य था – निर्धरित नीतियों एवं कार्यक्रम को लागू करना। कौटिल्य के अनुसार राजा राज्य का सर्वेसर्वा होता था। इसलिए मंत्रिापरिषद् के परामर्श को मानने के लिए बाध्य नहीं था ।

राज्य का तीसरा महत्वपूर्ण पदाध्किारी पुरोहित था । उसे वेदों, वेदांगों, ज्योतिष, निमित्तशास्त्रा तथा दंडनीति का पंडित होना चाहिए। उसे अथर्ववेद में निर्दिष्ट विभिन्न प्रकार की विपत्तियों के प्रतिकार संबंधी दिए गए उपायों का भी ज्ञान होना चाहिए। कौटिल्य के अनुसार राज्य पुरोहित का अनुकरण उसी प्रकार करे जैसे शिष्य गुरू का, पुत्रा पिता का और दास स्वामी का करता है।[7] पुरोहित का दर्जा राजगुरू का था तथा उसका मुख्य कार्य राजा के लिए पूजा एवं अनुष्ठान करना था। परन्तु राजा महत्त्वपूर्ण प्रशासकीय मामलों में उसकी सलाह लेता था तथा न्याय संबंधी कार्यों में भी उसका राय लेता था। राजा पुरोहित एवं मंत्राी की सहायता से अमात्यों की नियुक्ति करता था परन्तु इन अमात्यों की विभिन्न प्रकार की परीक्षाएँ ली जाती थी, पिफर उन्हें उनके चरित्रा के अनुकूल कार्य सौंपा जाता था। इन परीक्षाओं को ध्र्मोपद्या, अर्थोपद्या, ययोपद्या तथा कामोपद्या कहा गया है। जो सबों में उत्तीर्ण होता था उन्हें मंत्राी नियुक्त किया जाता था। इस प्रकार कौटिल्य ने राजकीय सेवा अथवा राज्याध्किारियों के विभिन्न श्रेणियों का उल्लेख किया तथा उनके वेतन निर्धरण किए हैं। वेतन–भत्ते की चर्चा करते हुए कौटिल्य ने राजसूय के अवसर पर मंत्राी एवं पुरोहित को विशेष वेतन भी देने का उल्लेख किया जो उनके वेतन का तीन गुना भी हो सकता था।

सेनापति राज्य का चौथा महत्त्वपूर्ण अध्किारी होता था जिसके अधीन सैन्यविभाग था। कौटिल्य ने उसे महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। उसका दर्जा युवराज से उफपर रखा गया है। सेनापति पद के लिए कुलीनता तथा साहस को गुण माना गया है। इसीलिए राज परिवार के सदस्य को ही पद नियुक्त करने का परामर्श दिया है । सेनापति के लिए अस्त्रा–शस्त्रा संचालन में, अश्व, हाथी तथा रथ संचालन में प्रवीण होना आवश्यक माना गया है। उसे यु(संचालन का भी ज्ञान होना चाहिए। वह संपूर्ण सेनाका प्रधन होता था। वैसे राजा स्वयं का सर्वोच्च अध्किारी होता था।

सेनापति के बाद युवराज का दर्जा था। युवराज की प्रशासन में संलिप्ता वस्तुतः उसका शासन कला में प्रशिक्षण था। मौर्यकाल में राजकुमारों को प्रांतीय शासक पद नियुक्त करने का प्रमाण मिलता है।

दौवारिक और अन्तर्वंशिक महल के महत्त्वपूर्ण पदाध्किारी थे। दौवारिक कार्य द्वारपाल जैसा था जो राजा को बाहर से आने वाले लोगों से मिलवाता था[8] अन्तर्वंशिक अन्तःपुर का अध्किारी होता था। कौटिल्य के अनुसार इन दोनों पदों को राजा को विश्वसनीय व्यक्तियों को नियुक्त करना चाहिए।

प्रशास्ता का उल्लेख कौटिल्य के आयुधध्यक्ष के रूप में की है। इसका मुख्य कार्य अध्किारियों को दी गई सजा को कार्यान्वित करना था[9] समाहर्ता तथा सन्निधता राज्य का अत्यंत महत्त्वपूर्ण पद था। कौटिल्य के अनुसार समाहर्त्ता का प्रमुख कार्य था आय–व्यय का लेखा–जोखा रखना तथा राजस्व संग्रह करना। समाहर्त्ता का कार्य केवल राजस्व संग्रह ही नहीं बल्कि व्यवसाय बनाये रखना भी था। उसके कार्य के सुविध के लिए कुछ पुलिस पदाध्किारियों को भी उसके अधीन रखा गया है। उसे दुर्ग, राष्ट्र, खनि, सेतु, वन, व्रज तथा व्यापार संबंधी कार्यों का निरीक्षण करना चाहिए।

कांगले महोदय के शब्दों में ''समाहर्त्ता, जिसके अधीन अनेक पदाध्किारी काम करते थे, आधुनिक राज्य के गृहमंत्राी की तरह है।''

समाहर्त्ता की तरह सन्निधता का पद भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। ये दोनों अधिकारी 'राजस्व प्रशासन' से जुड़े हुए थे। सन्निधता राज्य के समस्त भण्डारों का मुख्य अधिकारी था। इसके अधीन कोष, कुप्य, कोष्ठागार तथा आयुश्रागार के अध्यक्ष कार्य करते थे। यह दोनों ही पद राज्य की शक्ति के लिए महत्त्चपूर्ण थे।

अन्य तीर्थों अथवा पदाधिकारियों में नायक एक प्रमुख सैन्य अधिकारी प्रतीत होता है। पौर राजधनी का अधीक्षक को कहा जाता था और व्यावहारिक नगर न्यायाधीश का कार्य करता था। कार्मान्तिक के जिम्मे निर्णय एवं उत्पादक की जिम्मेदारी सौंपी गई हैं दंडपाल एक आरक्षी पदाधिकारी और दुर्गपाल किले की देख–भाल करने वाला अधिकारी का नाम है। आटविक के जिम्मे वन सम्पदा की जिम्मेदारी सौंपी गई हैं अंतपाल सीमावर्ती क्षेत्रा का रक्षक होता था।

इन अठ्ठारह तीर्थों के अतिरिक्त कौटिल्य ने नागरिक नामक अधिकारी का उल्लेख किया है तथा उसके कार्यों का वर्णन किया है। अर्थशास्त्रा के दूसरे अध्किरण के छत्तीसवें अध्ययाय में वर्णित उसके कार्यों से प्रतीत होता है कि उसका कार्य नगर का प्रबन्ध् करना था।

कौटिल्य की प्रशासनिक दूरदर्शिता का सूचक यह भी है कि उसने केन्द्रीय सचिवालय का भी उल्लेख किया है। जिसके अधिकारियों को लेखक कहा जाता था। उसकी योग्यता में सुन्दर वाक्य योजना में निपुणता, विभिन्न लिपियों का ज्ञाता, सुलेख की जानकारी रखने वाला आदि गुण सम्मिलित किए गए हैं। उसे राजा का संदेश ध्यानपूर्णक सुनना चाहिए तथा पूर्व प्रसंगों को ध्यान में रखकर स्पष्ट अर्थों वाला लेख लिखना चाहिए। इस प्रकार भारत में ईसा से तीन सौ वर्ष पूर्व ही सचिवालय गठित हो चुका था।

इन अधिकारियों के अतिरिक्त कौटिल्य ने विभिन्न प्रशासनिक विभागों का उल्लेख किया है। अर्थशास्त्रा में जिन प्रमुख विभागों का उल्लेख हुआ है वे निम्नलिखित हैं।

1. कोष विभाग, 2. कर संग्रह विभाग, 3. अक्षपटल, 4. खनन विभाग, 5. अक्षशाला, 6. पण्य विभाग, 7. कुप्य विभाग, 8. आयुधगार, 9. माप तौल विभाग, 10. शुल्क विभाग, 11. सूत व्यवसाय विभाग, 12. कृषि विभाग, 13. आबकारी विभाग, 14. वध्शाला, 15. वैश्यालय संबंधे विभाग, 16. नौका विभाग, 17. पशु विभाग, 18. अश्व विभाग, 19. गज विभाग, 20. सेना विभाग, 21. मुद्रा विभाग, 22. चारागाह विभाग। ये सभी विभाग के प्रधन अध्यक्ष कहे जाते थे। महाभारत, रामायण में इन विभागों की संख्या अठ्ठारह तथा शुक्र ने इनकी संख्या बीस मानी है।

अक्षपटल का भवन राजधनी में स्थित होता था जिसके अध्यक्ष के जिम्मे राज्य का लेखा–जोखा रहता था। आधुनिक कालीन एकाउन्टेन्ट जेनरल से अक्षपटलाध्यक्ष की तुलना की जा सकती थी। इसका एक अलग भवन होता था जिसमें लेखकों के बैठने की व्यवस्था थी।

कौटिल्य ने इस प्रकार प्रशासन के विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत रूप से विचार किया है। उसने योग्य अधिकारियों की नियुक्ति पर बल दिया है। कतिपय विद्वान कौटिल्य की प्रशासनिक व्यवस्था तथा मिस्र एवं सीरिया की तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था में समानता देखते हैं।

अन्तर्राज्य संबंध् और गुप्तचर व्यवस्था दोनों हीं कौटिल्य की व्यवस्था के महत्त्वपूर्ण अंग थे जिसपर राजा स्वयं नियंत्राण रखता था तथा उनमें रूचि लेता था। मौर्य प्रशासन में गुप्तचरों की उपस्थिति का उल्लेख कौटिल्य एवं मेगास्थनीज ने किया है। कौटिलय ने गुप्चर के महत्त्व पर विशेष बल दिया है । वस्तुतः राजतंत्रा में संपूर्ण राजकीय शक्ति राजा में निहित रहती है और अकेला राजा संपूर्ण शासनतंत्रा पर नियंत्राण नहीं रख सकता और न ही उनका निरीक्षण कर सकता है। इसीलिए कौटिल्य ने गुप्तचर व्यवस्था को राजा की शक्ति माना है।

कौटिल्य ने गुप्तचरों की दो श्रेणियों का उल्लेख किया है – संस्था तथा संचार । संस्था वर्ग के गुप्तचर एक ही स्थान में रहकर समस्त राज्य की गतिविध्यिों पर ध्यान रखता था तथा संचार गुप्तचर भ्रमणशील होते थे। स्थान पर रहने वाले ;संस्थाद्ध गुप्तचरों को पाँच श्रेणियों में विभाजित किया है। 1. कापटिक 2. उदास्थिति, 3. गृहपतिक, 4. वैदेहक, 5. तापस।

संचार गुप्तचर की कई श्रेणियाँ थी। 1. सत्री, 2. तीक्ष्ण, 3. रसद, 4. भिक्षुकी अथवा परिव्राजिका।

इन गुप्तचरों के अतिरिक्त कौटिल्य ने उभय वेतनभोगी गुप्तचर तथा विषकन्या का भी उल्लेख किया है। गुप्तचरों का कार्य था – राजा को राज्य में होने वाली सभी घटनाओं की सूचना देना।

अन्तर्राज्य संबंध् भी राजा तथा केन्द्रीय शासन की जिम्मेदारी थी। यु(एवं संध् के सार्थक उपयोग पर ही किसी राज्य की स्वतंत्राता निर्भर करती है। एक स्वतंत्रा राज्य में ही प्रजा के सुख एवं समृ(का विकास संभव है। राज्य के बीच मतभेद के निराकरण के लिए यु(को अंतिम उपाय के रूप में प्राचीन चिन्तकों ने उल्लेख किया है। आपसी सद्भाव तथा यु(के परित्याग को राजशास्त्रियों ने अध्कि महत्त्व दिया है। वैसे महत्त्वाकांक्षी राजा पड़ोसी राज्यों पर विजय प्राप्त करके अध्कि शक्तिशाली बनने की लालसा रखता था। ऐसी परिस्थिति में शक्ति संतुलन बनाये रखने के लिए कौटिल्य ने मंडल सि(न्त का प्रतिपादन किया है।

कौटिल्य के राज्यों के मंडल की कल्पना वृत्त के रूप में की है और इन्हें विभिन्न श्रेणियों में बाँटा है। 1. विजिगीषु, 2. अरि, 3. मित्रा, 4. अरि मित्रा, 5. मित्रा–मित्रा, 6. अरिमित्रा मित्रा, 7. पष्णिग्रह अथवा बिजिगीषु के राज्य के पीछे की ओर स्थित शत्रु, 8. आक्रन्द अथवा पीछे की ओर स्थित मित्रा,9. पार्ष्णिगाह सार अर्थात् पीछे की ओर शत्रु का मित्रा 10.

आक्रन्द सार अथवा पीछे की ओर स्थित मित्रा का मित्रा, 11. मध्यस्थ की स्थिति विजिगीषु और उसके शत्राु के बीच होती थी, जो दोनों के बीच संतुलन बनाये रखता था, 12. उदासीन राज्य अथवा तटस्थ राज्य वैसे राज्य थे जो राज्यों के आपसी झगड़े के प्रति तटस्थ भाव रखता हो और इतना शक्तिशाली हो कि दोनों में से कोई उसे छूने की चेष्टा न करे । मंडल सि(ान्त में राज्य और राजा को एक ही मानकर उनके गुणों एवं लक्षणों का विवेचन किया गयाहै।[10] कौटिल्य ने विजिगीषु राजा अथवा राज्य को केन्द्र में रखकर अन्य राज्यों को वर्गीकृत किया है । राज्य को इन राज्यों के चरित्रा को ध्यान में रखना ही नीति निर्धरित करना चाहिए। ये राज्य शत्राुवत् होंगे अथवा मित्रावत् । कौटिल्य यु(एवं विग्रह दोनों का उल्लेख करता है तथा वह विजीगीषु राजा को परामर्श देता है कि वह किन परिस्थितियों में यु(करे तथा किन परिस्थितियों में संधि करें ।

कौटिल्य के मंडल सि(ांत को आधुनिक युग के लिए अप्रासंगिक नहीं माना जा सकता। कौटिल्य का मंडल सि(ान्त अन्तर्राज्य संबंधें और विदेश नीति के क्षेत्रा में आज भी महत्त्वपूर्ण और प्रासंगिक है ।

कौटिलय ने विदेश नीति के लिए वाड.गुण्य नीति का उल्लेख किया है । ये छः गुण हैं – संधि, विग्रह, आसन, यान, संक्षय और द्वैधीभाव ।

वातव्याधि संधि में विग्रह को ही मुख्य गुण मानते हैं और बाकी को इन्हीं में निहित मानते हैं परन्तु कौटिल्य इन चारों को संधि विग्रह से अलग मानते हैं कौटिल्य के अनुसार अगर राजा अपने को शत्राु की तुलना में दुर्बल समझता हो तो संधि की नीति और अगर बलवान समझता हो तो विग्रह अर्थात् यु(की नीति अपनाना चाहिए। कौटिल्य ने षाड्.गुण्य सि(ांत के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है । अतः यु(एवं संधि राजा अथवा केन्द्रीय शासन की जिम्मेदारी था।

अन्तर्राज्य संबंध का दूसरा अंग था दूतों का आदान–प्रदान । दूतों की नियुक्ति तथा उन्हें प्रतिनिधि के रूप में दूसरे राज्यों में भेजना तथा दूसरे राज्यों के दूतों का दरबार में स्वागत करना अथवा उनसे मिलना राजा की ही जिम्मेदारी थी ।

निष्कर्ष

अंत में यह कहा जा सकता है कि कौटिल्य द्वारा चित्रित प्रशासकीय व्यवस्था अनेक प्रकार से सुगंधित तथा सुसज्जित थी। अगर हम वर्त्तमान समय की बात करें तो यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि कौटिल्य ने सशक्त राजतंत्रा को ध्यान में रखते हुए प्रशासनिक तंत्रा के स्वरूप और संगठन का निर्धरण किया है, जबकि वर्त्तमान प्रशासनिक तंत्रा लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए है। इसलिए इन दोनों की तुलना करना अनावश्यक है।

संदर्भ सूची

1. वी.पी. सिन्हा, रीडिंग्स इन कौटिल्याज अर्थशास्त्रा, पृ.–19, अर्थशास्त्रा, ग्प्ए 1.1 ;पी. कांगले द्वारा सम्पादितद्ध
2. अर्थशास्त्रा ;सम्प. कांगलेद्ध, प्प्ए 10.13
3. मणिशंकर प्रसाद, पूर्वोक्त ग्रंथ, पृ.–30, रामायण, महाभारत, नीति ग्रंथों, पुराणों स्मृतियों आदि में इस सम्बन्ध में लम्बी तालिका दी गई है। शांतिपर्व ;8070द्ध में 36, कामन्दक नीतिसार ;1/21–22द्ध में 19, मानसोल्लास ;2/1/1–7द्ध में 44 और अग्निपुराण ;239/2–5द्ध में 21 गुणों की सूची दी गई है। इसी प्रकार बाल्मीकि रामायण ;2/100/65–7द्ध में 14 दोषों का उल्लेख हुआ है। महाभारत के सभापर्व में अनेक दोषों का उल्लेख हुआ है – देखें, शिवस्वरूप सहाय, पूर्वाक्त ग्रंथ, पृ.–122
4. आर.पी. कांगले, पूर्वाक्त ग्रंथ, खंड–3, पृ.–117
5. देखें मणिशंकर प्रसार, पूर्वाक्त ग्रंथ, पृ.–37
6. अग्निपुराण ;222द्ध के अनुसार जिस प्रकार का गर्भवती माँ अपनी इच्छाओं और खुशियों को इसलिए त्याग देती है ताकि उसका प्रतिकूल प्रभाव होने वाले बच्चे पर नहीं पड़े, इसी प्रकार राजा को अपनी प्रजा के लिए अपनी इच्छाओं और खुशियों की कुर्बानी कर देनी चाहिए। मार्कण्डेय पुराण ;130–33द्ध के अनुसार राजा अपनी खुशियों और इच्छाओं की पूर्ति के लिए नहीं बना है, बल्कि उसका उद्देश्य कष्ट सहकर भी प्रजाजनों तथा धर्म की रक्षा करना है।
7. आर.के. मुखर्जी, पूर्वाक्त ग्रंथ, पृ.–81,अर्थशास्त्रा, 1/9
8. देखें मणिशंकर प्रसार, पूर्वोक्त ग्रंथ, पृ.–49
9. देखें मणिशंकर प्रसार, पूर्वोक्त ग्रंथ, पृ.–49
10. आर.पी. कांगले, पूर्वोक्त ग्रंथ, खंड–3, पृ.–128

RRIJM 2015, All Rights Reserved